Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 7, September-2018, ISSN 2230-7540

वर्तमान भारत में उच्च शिक्षा की प्रगति

Niharika Kumari*

Assistant Professor in Education, SMTTC, Ranchi

सार - ***शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है, जो अनुभवों में वृद्धि कर व्यक्ति के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाती है। शिक्षा किसी भी राष्ट्र के विकास का प्रमुख स्रोत है। किसी भी देश के विकास के लिए मानवीय संसाधनों का समुचित विकास आवश्यक है। मानवीय संसाधनों के विकास का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्भव हो सकता है। मानवीय संसाधनो के विकास की दृष्टि से उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। इस सम्बन्ध में डॉ. ए. एस. अल्तेकर (1944) ने कहा है कि शिक्षा प्रकाश का वह स्रोत है, जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हमारा सच्चा पथ प्रदर्शन करती है। उच्च शिक्षा शिक्षा का वह स्वरूप है, जो मनुष्य को कार्यगत एवं स्वभावगत विशिष्टता प्रदान करती है अर्थात उच्च शिक्षा मनुष्य को जीवन की विशिष्टता की ओर उन्मुख करती है। किसी देश के सतत विकास हेतु उच्च शिक्षा जीवन के विभिन्न मार्गों जैसे सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी आदि के लिए एक मुख्य स्रोत है। विश्वविद्यालय एवं उच्च शैक्षणिक संस्थान अपने अनुसंधान एवं उच्चतर प्रशिक्षण के माध्यम से वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान का सृजन करते हैं और जहाँ कहीं भी इस प्रकार का ज्ञान सृजित होता है उसे सम्पूर्ण विश्व में हस्तांतरित करने, फैलाने और अनुकूलन में मदद करते हैं। इस प्रकार उच्च शिक्षा किसी देश के प्रगति एवं समृद्धि का एक सूचक भी है।***

----------X----------

प्रस्तावना

उच्च शिक्षा तकनीकी खोज एवं नवाचार हेतु आधार प्रस्तुत करती है। अर्थव्यवस्था में उच्च कोटि के कुशल मानव शक्ति की आपूर्ति करती है। उच्च शिक्षा प्रणाली के निर्गतों के द्वारा समाज में आधुनिकता का प्रचलन होता है। यह सामाजिक नेतृत्व हेतु आधार प्रदान करती है। सार्वभौमिक मूल्यों जैसे मानवता, सहिष्णुता, अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना आदि को बढ़ाने में एक मंत्र की तरह कार्य करती है। अतः इसके महत्व एवं विकास को नकारा नहीं जा सकता है।

उच्च शिक्षा का इतिहास

भारत में शिक्षा का इतिहास काफी पुराना है। जब विश्व के तथाकथित विकसित देशों का नामों निशान भी नहीं था, तब से हमारे यहां वेदों जैसे गूढ़ ग्रन्थों का स्वरूप प्राप्त हो चुका था। जिनके अन्दर निहित समस्त ज्ञान विज्ञान को आज भी उद्घाटित नहीं किया जा सका है अर्थात् भारत में शिक्षा विदेशियों की देन नहीं है वरन् भारत शिक्षा के क्षेत्र में स्वयं में काफी समृद्ध रहा है। डॉ. एफ. डब्ल्यू. थामस (1955) के शब्दों में "भारत में शिक्षा का कोई विदेशी पौधा नहीं है, संसार का कोई भी ऐसा देश नहीं है जहाँ ज्ञान के प्रति प्रेम का इतने प्राचीन समय में अविर्भाव हुआ हो या जिसने इतना चिरस्थायी और शक्तिशाली प्रभाव डाला हो।"

भारतीय सभ्यता विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं मे से एक है। उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय सभ्यता उस समय भी विश्व की अन्य सभ्यताओं से उन्नत एवं समृद्ध थी। निश्चय ही तत्कालीन समृद्धि के मूल में शिक्षा का योगदान अवश्य रहा होगा, क्यांेकि शिक्षा और समाज तो एक दूसरे पर आश्रित हैं।

यद्यपि भारत में शिक्षा का बीजारोपण सुदूर अतीत में आज से लगभग 400 वर्ष पूर्व हुआ था। उसके सुसम्बद्ध स्वरूप के दर्शन, वैदिक काल के आरम्भ से होते हैं। इसका मूल कारण शायद तत्कालीन शिक्षा पद्धति का मौखिक स्वरूप था, क्योंकि भारतीय लिपि पद्धति का विकास काफी बाद में हुआ और उसके बाद ग्रन्थों को लिपिबद्ध किया गया। इससे पूर्व का समस्त साहित्य मौखिक रूप से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित किया गया और समृद्ध होता रहा।

भारत के इतिहास से स्पष्ट होता है कि भारत का राजनैतिक परिदृश्य काफी उतार चढ़ाव का रहा है। जिसने भारत की सामाजिक व्यवस्था पर भी अपना प्रभाव डाला। जिसकी वजह

www.ignited.in

से भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भी समय के अनुसार अनेकानेक परिवर्तन हुए तथा शिक्षा का प्रसार अनवरत रूप से जारी रहा।

वैदिक कालीन उच्च शिक्षा

वैदिक साहित्य में शिक्षा शब्द का प्रयोग अनेक अर्थों में किया गया जैसे-विद्या, ज्ञान, बोध और विनय। वैदिक कालीन शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य ईश्वर भक्ति एवं धार्मिक भावना का विकास, चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व विकास, नागरिक एवं सामाजिक कर्तव्यों का बोध, सामाजिक कौशल में वृद्धि एवं राष्ट्रीय संस्कृति का संरक्षण एवं प्रसार था। वैदिक काल में उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार केवल ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों को था, जिन्हें क्रमशः 8 11 और 12 वर्ष की आयु में शिक्षा संस्था में प्रवेश दिया जाता था। प्राचीन वैदिक काल में शिक्षा की अवधि 12 वर्ष थी। साहित्य तथा धर्मशास्त्र के छात्रों को अपनी शिक्षा पूरी करने में 15-16 वर्ष लग जाते थे। विशेष अध्ययन के लिए 101 या 105 वर्ष लग जाते थे। पाठ्यक्रम में पराविद्या और अपराविद्या दोनों को स्थान प्राप्त था। पराविद्या में वेद, वेदांग, पुराण, दर्शन, उपनिषद आदि आध्यात्मिक विषय थे। अपराविद्या में इतिहास, तर्कशास्त्र, भूगर्भशास्त्र, भौतिकशास्त्र आदि लौकिक विषय थे। प्राचीन वैदिक काल में शिक्षण विधि मौखिक थी। आध्यात्मिक शिक्षण पद्धति के तीन चरण थे-श्रवण, मनन, निदिध्यासन। इसके अतिरिक्त व्याख्यान, वाद-विवाद, शंका समाधान, शस्त्रार्थ पद्धति भी प्रचलित थी। छात्र गुरू से मंत्रों को सुनते थे उनके उच्चारणों का अनुकरण करते थे और पाठ्य विषयों को दोहराते थे। शिक्षा संस्थानों के रूप में गुरूकुल या ऋषिकुल, ऋषि आश्रम, चरण, परिषद तथा चरक और परिव्राजक थे। शिक्षा का माध्यम देव भाषा संस्कृत थी। गुरू शिष्य सम्बन्ध उच्च कोटि के थे। शिष्य गुरू को देव तुल्य समझता था और गुरू शिष्य को पुत्रवत् मानते थे।

बौद्धकालीन उच्च शिक्षा

बौद्धकाल में शिक्षा को निर्वाण प्राप्ति का साधन माना गया था। शिक्षा प्रारम्भ करने हेतु प्रव्रज्या (पबज्जा) संस्कार होता था। यह संस्कार प्रायः 8 वर्ष की आयु में किया जाता था। उच्च शिक्षा मठों में दी जाती थी और शिक्षा के द्वार सभी के लिए खुले थे। उच्च शिक्षा 20 वर्ष की अवस्था में उपसम्पदा संस्कार के पश्चात प्रारम्भ होती थी और जीवन भर चलती थी। बाद में जीवन भर का बन्धन समाप्त हो गया था। इस काल में उच्च शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालकों का आर्थिक सामाजिक जीवन के लिए तैयार करना था और सुयोग्य नागरिक बनाना था। उच्च शिक्षा में धार्मिक और लौकिक दो प्रकार का पाठ्यक्रम प्रचलित था। धार्मिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत बौद्ध धर्म की पुस्तकें एवं त्रिपटक आदि रहती थी। लौकिक पाठ्यक्रम में जीवनोपयोगी व्यवसायपरक विषयों की प्रधानता रहती थी। शिक्षा का माध्यम पाली एवं प्राकृत भाषायें थीं। उच्च शिक्षा के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक था। बौद्ध शिक्षा पद्धति, वैदिक शिक्षा पद्धति की भाँति ही मौखिक थी। बौद्ध विहार शिक्षण के प्रमुख स्थल थे परन्तु कालान्तर में सामान्य विद्यालयों में भी बौद्ध शिक्षा की व्यवस्था हो गयी थी। प्राचीन भारत के प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्रों में तक्षशिला (पाकिस्तान), नालन्दा (पटना), विक्रमशिला (मगध), वल्लभी (काठियावाड़), नदिया (बंगाल), औदन्तपुरी (मगध), कांची (दक्षिण भारत) और जगद्दला (बंगाल) थे।

मुस्लिम कालीन उच्च शिक्षा

कुरान शरीफ के अनुसार तालीम को 'निजात' (मुक्ति) का साधन माना गया। मुस्लिम कालीन शिक्षा का मुख्य उद्देश्य इस्लाम धर्म का प्रचार करना, मुसलमानों में ज्ञान का प्रसार करना, विंशिष्ट नैतिकता का विकास, मुस्लिम संस्कृति का संरक्षण एवं प्रसार, मुस्लिम शासन को सुदृढ़ बनाना, लौकिक ऐश्वर्य की प्राप्ति एवं शरीयत का प्रचार करना था। मध्य काल में प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था मकतबों में की गयी थी। मकतब में प्रवेश हेतु 'विसमिल्लाह' नामक रस्म होती थी यह रस्म उस समय होती थी जब बालक 4 वर्ष, 4 माह, 4 दिन का हो जाता था। मकतबों की शिक्षण विधि मौखिक थी। मदरसे उच्च शिक्षा के शिक्षण केन्द्र थे। उच्च शिक्षा की अवधि 10-12 वर्ष थी। उच्च शिक्षा में मुख्यतः दो प्रकार का पाठ्यक्रम था-धार्मिक एवं लौकिक। मकतबों की भाँति मदरसों की शिक्षण विधि भी मौखिक थी। यहाँ प्रायः व्याख्यान प्रणाली प्रचलित थी। विषयों के अनुरूप तर्क एवं प्रायोगिक विधि भी अपनायी जाती थी। शिक्षा का माध्यम अरबी-फारसी भाषायें थी। भारत में मुस्लिम शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र आगरा, दिल्ली, लाहोर, स्यालकोट, मुल्तान, जालंधर, मालवा, अजमेर, गुजरात, अहमदनगर, हैदराबाद, गोलकुण्डा, खानदेश, बीजापुर, जौनपुर, रामपुर, देवबन्द, फिरोजाबाद और लखनऊ थे।

ब्रिटिश कालीन उच्च शिक्षा

भारत में ब्रिटिशर्स ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र में 1857 ई0 में कोलकाता, मद्रास और बम्बई में विश्वविद्यालय की स्थापना की। इस काल में उच्च शिक्षा का उद्देश्य भारत में अंग्रेजी शिक्षा को बढ़ावा देना एवं अपने अनुकूल व्यक्ति तैयार करना था जबकि विश्वविद्यालय शिक्षा का उद्देश्य बताते हुये 1923 ई0 में न्यूमैन ने लिखा था कि "यदि विश्वविद्यालय शिक्षा का कोई व्यावहारिक उद्देश्य है तो मैं यह कह सकता हूँ कि यह समाज में उत्तम नागरिकों को प्रशिक्षित करना है।" 1882 ई0 में सम्पूर्ण

www.ignited.in

भारत में 68 कालेज थे। 1902 ई0 में इनकी संख्या 179 हो गयी जिसमें 145 आट्र्स कालेज एवं 39 व्यावसायिक शिक्षा के कालेज थे। जिनमें छात्रों की संख्या लगभग 23,009 थी। इसके अतिरिक्त 5 विश्वविद्यालय थे। 1905 ई. में महाविद्यालयों की संख्या घटकर 138 रह गयी इसका प्रमुख कारण कालेजों को मान्यता प्रदान करने के नियम कठोर कर दिये गये थे। उपरोक्त स्थिति को देखते हुये पुनः कालेजों की संख्या में वृद्धि करना अनिवार्य हो गया। इस कारण 1921 ई0 तक 207 कालेजों की स्थापना हो गयी और विद्यार्थियों की संख्या 54,473 हो गयी। साथ ही साथ 1916-1921 ई0 के बीच सात नये विश्वविद्यालय (मैसूर, पटना, बनारस, अलीगढ़, ढाका, लखऊ, उस्मानिया) की भी स्थापना की गयी। 1921-1937 ई0 तक 5 और नये विश्वविद्यालय दिल्ली (1922), नागपुर (1923), आन्ध्र प्रदेश (1926), आगरा (1927), अन्नामलाई (1929) खोले गये किन्तु नये कालेज नहीं खोले गये। 1936-1937 ई0 तक छात्रों की संख्या 1,26,228 तक पहुँच गयी। 1937-1947 ई0 तक चार नये विश्वविद्यालय त्रावणकोर (1937), उत्कल (1943), सागर (1946), राजपूताना (1947), की स्थापना की गयी। 1947 ई0 तक उच्च शिक्षा में छात्रों की संख्या बढ़कर 2,41,794 तक हो गयी।

1882 ई0 से 1990 ई0 तक की उच्च शिक्षा की प्रगति का परिमाणात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विश्वविद्यालय एवं उनमें शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही थी परन्तु विश्वविद्यालयों में जिस प्रकार की शिक्षा प्रदान की जा रही थी उसे अंग्रेजो द्वारा स्वयं के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता देने के उद्देश्य से की जा रही थी।

स्वतन्त्र भारत में उच्च शिक्षा

स्वतन्त्र भारत की निरन्तर बदलती नवीन सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता थी जो नवयुवकों को एक नयी दिशा प्रदान करे जिससे वे भारत को विश्व में एक निश्चित स्थान दिला सकें। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 4 नवम्बर 1948 ई0 में डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की। आयोग का प्रमुख उद्देश्य भारतीय विश्वविद्यालय शिक्षा पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना और उन सुधारों तथा विस्तारों के विषय में सुझाव देना जो देश की वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वांछनीय था।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के उद्देश्य

1. जनतंत्र को सफल बनाने वाले नागरिकों का निर्माण करना,
2. विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना,
3. राष्ट्रीय अनुशासन, अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध, आध्यात्मिक विकास, न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करना,
4. ऐसे नेताओं का निर्माण करना जो दूरदर्शी एवं साहसी हों,
5. ऐसे युवकों का निर्माण करना जो राजनैतिक, प्रशासकीय एवं व्यावसायिक क्षेत्र में नेतृत्व ग्रहण कर सकें,
6. विश्वविद्यालय के छात्रों में विविध प्रकार के ज्ञान का समन्वय करना तथा उसकी उपलब्धि के अवसर तथा साधन देकर ज्ञान के साथ-साथ आत्मिक विकास के अवसर देना,
7. नवयुवकों में देश की संस्कृति एवं सभ्यता का संचार करना,
8. छात्रों के न केवल मानसिक विकास वरन् शारीरिक विकास की ओर भी ध्यान देना,
9. भारत में ऐसी विभूतियों को तैयार करना जो राजनीति, प्रशासन, व्यवसाय, उद्योग एवं वाणिज्य आदि क्षेत्रों में स्वस्थ्य प्रतिनिधित्व कर सकें,
10. विश्वविद्यालयों के नवयुवकों में नैतिकता तथा सद्व्यवहार के आदर्शों की स्थापना करना तथा चरित्र, व्यक्तित्व एवं अनुशासन आदि गुणों का विकास करना था।

1947 ई. में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने कहा था “विश्वविद्यालय का दायित्व मानवता, सहनसीलता, तर्क, विचारों का विकास एवं सत्य की खोज करना है।” एच. हेदरिगटन ने अपनी पुस्तक The Social Function of University में विश्वविद्यालय का कार्य ज्ञान के उस व्यापक

www.ignited.in

स्वरूप का अन्वेषण करना बताया है जो मानव संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों के विकास एवं उन्नति में सहायक हो सके।

इस प्रकार स्पष्ट है कि विश्वविद्यालय का उद्देश्य छात्रों को केवल पुस्तकीय ज्ञान देना ही नहीं वरन् यहाँ के छात्रों को निरन्तर चिन्तन, मनन एवं अन्वेषण की एक सर्वथा नवीन दृष्टि को भी विकसित करना है, जो उस व्यक्ति का सर्वांगीण विकास तो करे साथ ही साथ समाज और राष्ट्र की आवश्यकताओं की पूर्ति में भी सहायक हो तथा नवयुवकों में ऐसी चेतना का विकास कर सकें जो उन्हें समस्त मानवीय गुणों से परिपूर्ण वास्तविक मानव बना सके। यदि विश्वविद्यालय अपने कत्र्तव्यों का समुचित रूप से पालन करे तो राष्ट्र एवं जनता का कल्याण हो सकता है। परन्तु वर्तमान में विश्वविद्यालयों का उद्देश्य महज पुस्तकीय ज्ञान होकर रह गया है। देश की परिस्थितियाँ बदल गयी हैं, लेकिन उच्च शिक्षा का उद्देश्य जिसे अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ सिद्ध के लिए निर्धारित किया था वह स्वतंत्रता के बाद भी जारी है। आज भी भारतीय स्नातक का उद्देश्य महज डिग्री हासिल करने तक ही रह गया और उसके लिए यह डिग्री प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने हेतु एक प्रमाणपत्र से अधिक नहीं है। आज का छात्र महज डिग्री धारण करने के उद्देश्य से स्नातक कक्षाओं में प्रवेश लेता है न कि ज्ञान एवं व्यक्तित्व के विकास के लिए।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में परिमाणात्मक रूप से तीव्र वृद्धि हुयी है लेकिन गुणात्मक रूप से नहीं।

उच्च शिक्षा में प्रगति के कारण

- प्रारम्भ में हमें बौद्धिक विचारों, नयी तकनीकियों आदि को विदेशों से आयात करना पड़ता था, हमें अपनी प्रगति के लिए उन पर निर्भर रहना पड़ता था, इसलिए हमें स्वयं की प्रगति के लिए दूसरों पर निर्भरता को छोड़ने के लिए
- अपने स्वयं के विचारों आविष्कारों, नयी तकनीकियों, अपने शैक्षिक संरचना, अपने पाठ्यक्रम के विकास के लिए उच्च शिक्षा की आवश्यकता हुयी। इस दृष्टिकोण हेतु उच्च शिक्षा में तीव्र प्रगति हुयी।
- जब कोई नये विचार वृद्धि करता है तो उनके क्रियान्वयन के लिए हमें शिक्षित मानव शक्ति की आवश्यकता होती है, साथ ही साथ नियोजित आर्थिक विकास के लिए भी हमें शिक्षित मानव संसाधनों की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु उच्च शिक्षा की प्रगति पर व्यापक असर पड़ा।
- ऐसे लोग जो कई वर्षों या शताब्दियों से पिछड़े दबे कुचले थे उन्हें देश की मुख्य धारा में लाने के लिए उच्च शिक्षा की प्रगति की ओर ध्यान दिया गया।
- प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण से साक्षरता की दर में बढ़ोत्तरी होने से अधिक मात्रा में माध्यमिक विद्यालयों की आवश्यकता हुयी और इसी प्रकार इनसे निकलने वाले छात्रों के लिए उच्च शिक्षा प्रदान करने हेतु अधिक संख्या में उच्च शैक्षिक संस्थानों की आवश्यकता हुई। इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु उच्च शिक्षा की प्रगति पर जोर दिया गया।

वर्तमान भारत में उच्च शिक्षा की प्रगति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था में पर्याप्त प्रगति हुई। जहाँ 1957 ई0 में 20 विश्वविद्यालय और 500 कालेज में 2.1 लाख छात्र और छात्रायें उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। वहीं आज वर्तमान में 711 विश्वविद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर के संस्थानों के साथ 40,760 कालेज हैं जिनमें 265.85 लाख छात्र एवं छात्रायें उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। परन्तु आज भी पर्याप्त विश्वविद्यालय खुलने पर एवं सम्बद्ध महाविद्यालयों की संख्या में वृद्धि होने पर भी सभी इच्छुक छात्रों को सुगमता से प्रवेश नहीं मिल पाता है। भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली सर्वोत्तम रूप से संगठित किया हुआ, गहन रूप से विभिन्न स्तरों में वर्गीकृत किया हुआ तथा मुख्य रूप से सार्वजनिक रूप से नियंत्रित, समर्पित एवं वित्त प्रदत्त है। यह विस्तृत प्रणाली 1980 के दशक तक लगभग सम्पूर्ण रूप से केन्द्र एवं राज्य सरकारों द्वारा समर्पित था। 1990 ई0 में सार्वजनिक उच्च शिक्षा पर 90 प्रतिशत भारत में, 88 प्रतिशत ऑस्ट्रेलिया में (1988), 89.40 प्रतिशत फ्रांस में (1984), तथा 90 प्रतिशत नार्वे में (1987) था। परन्तु प्राथमिक शिक्षा का प्रतिफल का दर 25 प्रतिशत की तुलना में उच्च शिक्षा का प्रतिफल दर एक प्रतिशत है। इसलिए इसे अब नॉन मेरिट गुड की संज्ञा दी गई है। (फ्रांसिस सैदराज 2001)

संसाधनों की कमी के कारण तथा अन्य क्षेत्रों में संसाधनों की बढ़ती हुयी मांग के कारण भारत अपने सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 60.6 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करने में असमर्थ है, जो कि 1964-65 की शिक्षा नीति में कहा गया था।

उच्च शिक्षा का निजीकरण

निजीकरण से तात्पर्य है कि ऐसा क्षेत्र जिसमें सरकार की कोई भागीदारी न हो। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सरकार की भागीदारी

www.ignited.in

को कम करके निजी उच्च शिक्षा संस्थानों का खोलना, उच्च शिक्षा का निजीकरण कहलाता है। भारत में उच्च शिक्षा का निजीकरण मूलतः सरकार की आर्थिक हिस्सेदारी को कम करने से है।

तिलक (1999) ने उच्च शिक्षा के निजीकरण को चार भागों में विभाजित किया है जो निम्नलिखित है-

Extreme Privatization- इस प्रकार के निजीकरण में सरकार का हस्तक्षेप होता है किन्तु बहुत कम होता है।

Strong Privatization- इस प्रकार के उच्च शिक्षा के निजीकरण में उच्च शिक्षा का प्रबन्ध सार्वजनिक होता है किन्तु सम्पूर्ण धन की व्यवस्था निजी संस्थाओं द्वारा (छात्रो की फीस अन्य) द्वारा की जाती है।

Moderate Privatization- इसके अन्तगत उच्च शिक्षा के लिए वित्त का प्रबन्ध अन्य सरकारी श्रोतांे से किया जाता है।

Pseudo Privatization- इसका अर्थ है कि सरकारी खर्चों पर निजी संस्थाओं द्वारा उच्च शिक्षा का प्रबन्ध करना।

उच्च शिक्षा के निजीकरण से सम्बन्धित विभिन्न नीतियाँ एवं सन्तुष्टियाँ

- राधाकृष्णन आयोग(1948-49) ने उच्च शिक्षा का दायित्व सरकार को देते हुए कहा कि आर्थिक सहायता का अर्थ विश्वविद्यालयों में सरकारी हस्तक्षेप नहीं है। आयोग के ही शब्दों में "उच्च शिक्षा निःसंदेह सरकार का दायित्व है पर सरकारी सहायता को शैक्षिक नीतियों एवं कार्यक्रमों पर सरकारी नियंत्रण नहीं माना जाना चाहिये। इसे अक्षरशः अपनाते हुये निजीकरण की शुरूआत की गयी।"
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है "जिस हद तक सम्भव होगा, इन विभिन्न तरीकों के साधन जुटाये जायेंगे-चंदा इकट्ठा करना, स्थानीय लोगों की मदद लेना, उच्च शिक्षा स्तर पर फीस बढ़ाना तथा उपलब्ध साधनों का बेहतर प्रयोग करना।" इससे भी निजीकरण के बढ़ावे को प्रोत्साहन दिया।
- 1991 ई0 में नई आर्थिक नीति लागू की गयी जिससे L.P.Q. प्रणाली अर्थात लाइसेंसिंग, परमिट एवं कोटा प्रणाली के स्थान पर L.P.Q. प्रणाली अर्थात उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण प्रणाली को अपनाया गया। इस नीति के लागू होने के पश्चात U.G.C. द्वारा यह तर्क दिया गया कि शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने तथा उच्च शिक्षा को नयी सूचना तकनीकी उन्मुख एवं रोजगार उन्मुख बनाने हेतु जिस विशाल राशि की आवश्यकता है उसे जुटा पाने में सरकार असमर्थ है। अतः अन्य स्रोतों से साधनों को जुटाने की आवश्यकता है।
- 1992 ई0 U.G.C. द्वारा गठित डॉ. के. पुन्नैया समिति में उच्च शिक्षा के निजीकरण की संस्तुति दी गयी और विश्वविद्यालय को अपने लिये संसाधनों को बढ़ाने की संस्तुति दी साथ ही शैक्षणिक मानकों को बनाये रखने को भी कहा गया।
- 1993 ई0 में बजट भाषण में तत्कालीन वित्त मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने उच्च शिक्षा हेतु निजी स्रोतों से संसाधनों को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक प्रलोभनों की घोषणा की। ऐसे उद्योगों के लिए आयकर की छूट 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 100 प्रतिशत कर दी गयी।
- 21वीं शताब्दी के लिए शिक्षा पर अंतर्राष्ट्रीय आयोग ने अपनी रिपोर्ट "लर्निंग दी टीजर विद इन 1996" में कहा कि यह न केवल न्यायपूर्ण है वरन् निजी स्रोतों से मुद्रा इकट्ठा करना वांछित भी है, जब राष्ट्रीय बजट पर काफी दबाव बना हो।
- 1999 में न्ण्ळण्ब्ण् द्वारा अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति महमुर्दरहमान की अध्यक्षता में केन्द्रीय विश्वविद्यालय शैक्षणिक ढांचे की समीक्षा हेतु एक समिति का गठन किया जिसमें कहा गया कि भविष्य में एक छात्र पर होने वाले पूरे शैक्षणिक व्यय को शिक्षण शुल्क के रूप में छात्र से वसूल किया जाना चाहिये।
- विश्व बैंक द्वारा "विकासशील देशों में शिक्षा पर व्यय" पर एक रिपोर्ट में यह कहा गया कि वे आर्थिक संसाधनों की कमी को देखते हुए शिक्षा पर आने वाले व्यय का एक बड़ा हिस्सा अभिभावकों के द्वारा लिया जाये।
- 1993 ई. के वित्त मंत्री के बजट के भाषण के बाद और नयी औद्योगिक नीति के तहत् उदारीकरण प्रक्रिया से उत्साहित होकर व्यापारिक वर्ग ने भी उच्च

www.ignited.in

शिक्षा में रूचि लेना प्रारम्भ कर दिया। जिसके फलस्वरूप प्रधानमंत्री को आर्थिक सलाहकार परिषद के दो सदस्यों मुकेश अम्बानी एवं कुमार मंगलम बिड़ला द्वारा 24 अप्रैल 2000 को "ए पालिसी, फ्रेमवर्क फार रिफाम्र्स इन एजूकेशन" नामक रिपोर्ट में सरकार को उच्च शिक्षा के क्षेत्र से निकाले जाने और उच्च शिक्षा को स्ववित्तपोषित बनाने की जोरदार वकालत की गयी। इस विशेष अध्ययन दल के विचार में उच्च शिक्षा से सामान्य को लाभ न पहुँचाकर कुछ विशेष लोगों को ही लाभ पहुँचता है इसलिए इस छात्र पर होने वाला व्यय छात्र द्वारा ही वहन किया जाना चाहिये। यह रिपोर्ट शिक्षा को लागत तथा लाभ के सिद्धांत पर आधारित करती हुयी बाजार आधारित शिक्षा प्रणाली की वकालत करती है।

- U.G.C. सरकारी उच्च शिक्षण संस्थाओं को भी स्ववित्तपोषित पाठ्यक्रमों के माध्यम से शिक्षा के व्यापार में अधिक से अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त करने वाले प्रतिद्वन्दी के रूप में खड़ा करने की पूरी कोशिश कर रही है। परिणामगत सरकारी संस्थाओं में भी कोचिंग सेन्टरों और प्राइवेट कालेजों की तरह वित्तपोषित डिग्रियाँ बेचना शुरू कर दिया है।

- 2002 इ. में स्ववित्तपोषित संस्थाओं एवं पाठ्यक्रमों के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायलय ने कहा कि "पूरी सीट का 50 प्रतिशत मेरिट के आधार पर नामांकन किया जायेगा तथा उनकी फीस ठीक उतनी ही होगी जितनी सरकारी शिक्षण संस्थायें लेती हैं और बाकी 50 प्रतिशत सीट पेमेन्ट होगी जिनकी फीस आदि अन्य से अधिक होगी।" (एल0 सी0 सिंह)

- सैम पित्रौदा के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2005) ने उच्च शिक्षा के क्षेत्र को प्रोत्साहित करने के लिये शिक्षा में निजी पूंजी निवेश की जरूरत पर बल दिया था, और उनके इस प्रस्ताव को सरकार में सुधारवादियों की ओर से जोरदार समर्थन मिला था, आयोग ने यह भी सुझाव दिया था कि निजी पूंजी निवेश को आकर्षित करने के लिए होना चाहिये लाभ के लिए नहीं।

- सरकार लोक संसाधन मुहैया कराए, खासकर जमीन की मंजूरी के रूप में। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने विश्वविद्यालयों को आर्थिक सहायता देने के लिए संसाधनों को बढ़ाने का सुझाव दिया था। इसमें विश्वविद्यालयों को पैसा उगाहने के लिए जमीन से लाभ कमाने का भी सुझाव था। एन.के.सी. के रूप में भारी संसाधन उपलब्ध हैं जिनका कोई लाभ नहीं उठाया गया है। विश्वविद्यालयों के लिए ऐसे नियम बनाये जाने चाहिए जिससे वे वित्तीय संसाधन के तौर पर अपनी जमीन का इस्तेमाल कर सकें।

- राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का कहना है कि भारी लागत की पूर्ति छात्रों से मोटी फीस वसूल कर की जाये। साथ ही साथ उच्च शिक्षा के क्षेत्र को उद्योग जगत से करीबी सम्पर्क बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग का आकलन था कि विश्वविद्यालय शिक्षण में निजी निवेश लगभग नगण्य है, जबकि प्रोफेशनल शिक्षा में निजीकरण है।

निजी क्षेत्र के अधिकरणों का प्रशासन

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) प्रतिवेदन के अनुसार आज भी समस्त देश में 33.2 प्रतिशत संस्थायें निजी क्षेत्र में ही हैं। इनमें पूर्व प्राथमिक स्तर पर 70 प्रतिशत, प्राथमिक स्तर पर 22.2 प्रतिशत, उच्च प्राथमिक स्तर पर 27.11 प्रतिशत, विशिष्ट शिक्षा 79 प्रतिशत, माध्यमिक स्तर पर 69.2 प्रतिशत, व्यावसायिक शिक्षा स्तर पर 57.4 प्रतिशत तथा उच्च शिक्षा स्तर पर 78.8 प्रतिशत संस्थायें हैं। इस प्रकार पूर्व प्राथमिक, माध्यमिक, व्यावसायिक, उच्च शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा के क्षेत्र में निजी क्षेत्र अगुवाई कर रहा है।

निजी शिक्षा अधिकरण के प्रकार

निजी शिक्षण संस्थाओं को उनके प्रशासन की विविधता के आधार पर निम्नलिखित भागों में बांटा जा सकता है-

- धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित निजी महाविद्यालय।

- मिशनरी इसाइयों द्वारा संचालित महाविद्यालय।

- सार्वजनिक ट्रस्ट या कार्पोरेशन संगठन द्वारा संचालित महाविद्यालय।

- व्यक्ति विशेष द्वारा संचालित महाविद्यालय।

भारत एक धर्म निरपेक्ष राज्य है। अतः किसी भी धर्म को अपने धर्म के अनुसार शिक्षा देने की स्वतंत्रता है। अतः देश में लगभग सभी धर्मों के संगठन धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था करते हैं परन्तु सरकार धर्मनिरपेक्ष महाविद्यालयों को ही अनुदान

www.ignited.in

तथा मान्यता दे सकती है। अतः धार्मिक शिक्षा देने वाले महाविद्यालयों को अनुदान नहीं मिल सकता है।

धार्मिक संगठनों द्वारा संचालित विद्यालयों में इसाई मिशनरियों द्वारा संचालित महाविद्यालय सम्पन्न वर्ग में बहुत जनप्रिय है। इनकी आय का मुख्य स्रोत छात्रों द्वारा दी जाने वाली भारी राशि होती है। इसाई मिशनरियों द्वारा संचालित महाविद्यालयों का संचालन किसी एक व्यक्ति या उसके विश्वस्त व्यक्तियों की प्रबन्ध समिति द्वारा होता है। इनका मुख्य उद्देश्य व्यावसायिक अधिक तथा शैक्षिक कम होता है।

सार्वजनिक ट्रस्ट या कार्पोरेशन संगठन द्वारा संचालित महाविद्यालय वे महाविद्यालय हैं जिनके संसाधन सार्वजनिक होते हैं और जो समाज या देश के विकास के लिए कार्य करते हैं वे कोई न कोई सामाजिक लक्ष्य लेकर चलते हैं।

स्व-वित्त पोषित अवधारणा का विकास

भारत में स्व-वित्त पोषित अवधारणा की उत्पत्ति सर्वप्रथम 1970 के दशक में डॉ. टी. एम. पाई ने मनिपाल में इंजिनियरिंग एवं मेडिकल के क्षेत्र में की। स्व-वित्त पोषित का अर्थ है कि "शिक्षा के कार्यक्रमों पर होने वाले व्यय को छात्रों से शुल्क के रूप में लिया जाये।" भारतीय उच्च शिक्षा में स्व-वित्त पोषित प्रणाली अंतर्राष्ट्रीय स्व-वित्त पोषित विश्वमॉडल से प्रभावित है। अमेरिका की उच्च शिक्षा प्रणाली द्वैत प्रणाली है। एक भाग राज्यों द्वारा समर्थित है तो दूसरा भाग स्व-वित्त पोषित अर्थात निजी रूप से वित्त पोषित है। बढ़ी हुयी लागत के कारण उच्च शिक्षा सरकारी पर्स से निकलकर निजी पर्स में आ गयी। अधिकांश ऐशिया के देशों में जैसे जापान, कोरिया, ताईवान तथा फिलीपीन्स आदि में अधिकतर छात्र निजी विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में अध्ययन करते हैं और अपनी अध्ययन का पूरा खर्च स्वयं वहन करते हैं।

स्व-वित्त पोषित अवधारणा का प्रयोग हम यहाँ दो अर्थों में करेंगे। प्रथम स्व-वित्त पोषित शिक्षण संस्थायें वे संस्थायें हैं जो निजी व्यक्तियों के द्वारा चलायी जाती हैं, प्रबंध की जाती है तथा वित्तीय व्यवस्था की जाती है जिन्हें निजी संस्थायें भी कहते हैं। द्वितीय स्व-वित्त पोषित पाठ्यक्रम जिनमें नामांकन होने की एकमात्र कसौटी भारी मात्रा में फीस है, जिनमें छात्रों के अभिभावकों से पूरी शिक्षा की लागत वसूल करके दाखिला दिया जाता है।

आज मनिपाल में इंजीनियरिंग और मेडिकल कालेजों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। ये डीम्ड टू वी यूनिवर्सिटी होती जा रही हैं। पिछले कुछ वर्षों के दौरान कर्नाटक, तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश आदि राज्यों में विशिष्टतः पूरे देश में सामान्यतः स्व-वित्त पोषित संस्थाओं एवं पाठ्यक्रमों का विस्तार तेजी से हुआ है। स्व-वित्त संस्थाओं एवं पाठ्यक्रमों के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने 1993 ई0 में कुछ दिशा निर्देश/मानक प्रस्तुत किये हैं। इनके अनुसार पूरे सीट का 5 प्रतिशत मेरिट के आधार पर नामांकन किया जायेगा। उनका फीस ठीक उतना ही होगा जितना सरकारी शिक्षण संस्थायें लेती हैं और बाकी 50 प्रतिशत सीटें 'पेमेंट सीट' होगी जिनकी फीस आदि अन्य से अधिक होगी।

स्व-वित्त पोषित पाठ्यक्रम में चलाये जाने वाले विभिन्न पाठ्यक्रमों को निम्न रूपों में बांटा गया है-विशिष्ट पाठ्यक्रम, वोकेशनल पाठ्यक्रम और उच्चतर डिग्री पाठ्यक्रम। यह विभाजन समय और लागत के आधार पर किया गया है। स्व-वित्त पोषित पाठ्यक्रम की फीस अलग-2 संस्थाओं में अलग-2 होती है। पाठ्यक्रमों की निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर तय की जाती है। पाठ्यक्रम का मूल्य, इसकी बाजार मांग, डिग्री, डिप्लोमा या सर्टिफिकेट किस प्रकार/श्रेणी का पाठ्यक्रम है, पाठ्यक्रम की समयावधि, विश्वविद्यालय/शिक्षण संस्थान का स्तर, छात्रों का भुगतान करने की योग्यता, सरकारी सहायता आदि इसके निर्धारक हैं।

विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थाओं द्वारा स्व-वित्त पोषित पाठ्यक्रमों को चलाना बहुत अच्छा विचार है। वास्तव में उसने अनेक विश्वविद्यालयों को अलग-2 विभिन्न विधाओं में नये विभागों को स्थापित करने में मदद किया है। छात्र भी इन पाठ्यक्रमों से लाभान्वित हुये हैं और हो रहे हैं। वर्तमान में पूरे देश में विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं शिक्षण संस्थाओं में इन पाठ्यक्रमों को लेकर काफी अधिक संभावना है। परम्परागत पाठ्यक्रम 'रोजगार खोलने वाला' पैदा करता है जबकि ये अत्याधुनिक पाठ्यक्रम 'रोजगार देने वाला' पैदा कर रहे हैं। चूँकि इन व्यावसायिक एवं रोजगार उन्मुख पाठ्यक्रमों की मांग बाजार में बढ़ती जा रही है, इसलिए अनेक निजी संस्थायें, कालेज और विश्वविद्यालय भी ये पाठ्यक्रम चला रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में वित्तीय संकट विकसित और विकासशील दोनों प्रकार के देशों में दृष्टिगोचर हो रही है। विभिन्न अर्थव्यवस्थायें अपनी वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक प्रकार की विधियाँ एवं तरीके अपनायी हुयी हैं जिनमें स्व-वित्त पोषित पाठ्यक्रमों का प्रारम्भ करना महत्वपूर्ण है और आवश्यकता एवं समयानुकुल है।

निजीकरण की अवधारणा का महत्व

निजीकरण की अवधारणा का विकास एक ओर जहाँ केन्द्र एवं राज्य सरकारों को वित्तीय दबावों से मुक्त करेगी वहीं दूसरी ओर भारत में लोकतन्त्रात्मक शिक्षा प्रणाली के उद्देश्य को पूर्ण करने में भी सहायता प्रदान करेगी।

परम्परागत विषयों में स्नातक एवं स्नातकोत्तर होने के बावजूद भी अनेक विद्यार्थी बेरोजगार रहते हैं। अतः बहुत आवश्यक है कि ऐसे पाठ्यक्रमों का संचालन हो जिससे रोजगार के अवसर उपलब्ध हों। भारत एक विकासशील देश है जिसमें शिक्षा के ऊपर व्यय कम किया जा रहा है। चूँकि अत्याधुनिक उपकरणों, प्रयोगशालाओं, रोजगारपरक एवं आधुनिक सूचना तकनीकी, फर्नीचर, प्रोफेशनल एवं उच्च तकनीकी शिक्षा के लिए धन की आवश्यकता अधिक होती है।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद

1973 के पूर्व राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की भूमिका अध्यापक शिक्षा से सम्बन्धित सभी विषयों पर केन्द्रीय और राज्य सरकारों के लिए एक सलाहकार निकाय के रूप में थी। परिषद का सचिवालय राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एन.सी.ई.आर.टी.) के अध्यापक शिक्षा विभाग में स्थित था। शैक्षणिक क्षेत्र में अपने प्रशंसनीय कार्य के बावजूद परिषद अध्यापक शिक्षा के मानकों को बनाये रखने तथा घटिया अध्यापक शिक्षा संस्थानों की बढ़ोत्तरी को रोकने के अपने अनिवार्य विनियामक कार्य नहीं कर सकी थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और उसके अधीन कार्य योजना में अध्यापक शिक्षा प्रणाली को सर्वथा दुरूस्थ करने के लिए पहले उपाय के रूप में संविधिक दर्जे और अपेक्षित संसाधनों से युक्त राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की कल्पना की गयी थी। एक सविधिक निकाय के रूप में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद अधिनियम 1993 के अधीन (1993 का 73वाँ) राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद 17 अगस्त 1995 से अस्तित्व में आयी।

उपसंहार

प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य राज्य के स्व-वित्त पोषित उच्च शिक्षा संस्थानों का विकास (संख्यात्मक वृद्धि), संस्थाओं के भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की उपलब्धता, संस्थानों की समस्यायें, स्व-वित्त पोषित उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रति शिक्षकों एवं विद्यार्थियों की अभिवृत्तियों एवं शिक्षकों की कार्य संतुष्टि का अध्ययन करना तथा इन संस्थानों में गुणात्मक सुधार हेतु मॉडल प्रस्तुत करना है। प्रस्तुत उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्व-वित्त पोषित उच्च शिक्षा संस्थानों की भौतिक एवं मानवीय संसाधनों एवं समस्याओं हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली, शिक्षकों हेतु स्व-वित्त पोषित उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रति स्वनिर्मित अभिवृत्ति मापनी, छात्रों हेतु स्व-वित्त पोषित उच्च शिक्षा संस्थानों के प्रति अभिवृत्ति मापनी तथा अध्यापक कृत्य संतोष मापनी उपकरणों का प्रयोग करके आँकड़ों को एकत्रित किया गया एवं उपयुक्त सांख्यिकीय का प्रयोग करके उनका विश्लेषण किया गया।

संदर्भ

1. ओबराय, एम. (2010). भारत संक्षिप्त विवरण, नई दिल्लीः न्यू विशाल पब्लिकेशन।
2. कौल, लोकेश (2004). शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली, नई दिल्लीः पब्लिकेशन हाउस।
3. गुप्ता, आर. (2012). हरियाणा सामान्य ज्ञान-एक परिचय, नई दिल्लीः रमेश पब्लिशिंग हाउस ।
4. त्यागी, गुरसरन दास (2012). भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं विकास, आगराः अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
5. चतुर्वेदी, बादल (2011). उत्तर प्रदेश 2011, लखनऊः भारत बुक सेन्टर।
6. बाजपेयी, एल.बी. (2000). भारतीय शिक्षा का विकास एवं सामयिक प्रवृत्तियाँ, लखनऊः आलोक प्रकाशन।
7. पाल, राम बहादुर (2005). स्ववित्त पोषित अध्यापक शिक्षा संस्थाओं में भौतिक एवं मानवीय संसाधनों की स्थिति एवं उपयोग का अध्ययन, शोध एवं अध्ययन, शिक्षा विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय।
8. वशिष्ठ, के0 के0 (2006). विद्यालय संगठन एवं भारतीय शिक्षा की समस्यायें, मेरठः लायल बुक डिपो।
9. सिंह, अरूण कुमार (2003). मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन।

www.ignited.in

10. त्रिपाठी, केसरी नन्दन एवं आलोक कुमार (2012). उत्तर प्रदेशः एक समग्र अध्ययन, इलाहाबादः बौद्धिक प्रकाशन।

Corresponding Author

Niharika Kumari*

Assistant Professor in Education, SMTTC, Ranchi